Cosmos Multidisciplinary Research E-Journal
Recognized International Peer Reviewed Journal Impact Factor 5.69
Online Available at www.cmrj.in
ISSN No. 2456-1665

स्वातंत्र्योत्तर आत्मकथा साहित्य में बदलते स्त्री -पुरुष सम्बन्ध

डॉ. विनि विकास ढोमणे
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
जे. ऍम. पटेल कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय,
भंडारा ४४१९०४

समाज का छोटा सा रुप परिवार है। परिवार के रूप में समाज के एक छोटे अंग को सुविकसित करने का उत्तरदायित्व प्रत्येक स्त्री-पुरुष या पति पत्नी के कन्धे पर रखा हुआ हैं। इसलिये जहाँ परिवार का भरण-पोषण करने का ध्यान रखा जाता है, वहाँ उनके गुण, धर्म, कर्म, स्वभाव, व्यवहार, संस्कार को परिष्कृत करने का प्रयत्न भी गृहपति को करना पड़ता है। परिवार के इन सब कार्यो का अवलम्बन स्त्री-पुरुष संबंध होता है।

पहले हमारी भारतीय समाज-संरचना की बुनियाद संयुक्त परिवार रही है। जिसकी परम्परायें, मान्यतायें, प्रथायें, मूल्य हमेशा सामूहिक रहने के कारण सामूहिक परिवार को संयुक्त रखने में महत्वपूर्ण थी। तब हिंदू परिवार में दो या तीन पीढ़िया रहती थी। इस प्रकार परिवार में मुख्य रूप से गृहस्थ के पूर्वज, माता-पिता, पितामह, पुत्र-पुत्रवधुएं और उनके बच्चें, आश्रित विधवा बहने व अन्य आश्रित लोग सामूहिक रूप से रहते थे। कुटुम्ब की संपत्ति, व्यवसाय बराबर के हकदार होते। इस प्रकार परिवार मानव समाज की प्राचीनतम् एवं महत्वपूर्ण संस्था हैं। परिवर्तित परिस्थितीयों तथा कालानुसार किंतु इसके स्वरूप में परिवर्तन होता रहता हैं। स्वातन्त्रपूर्व के इन संयुक्त परिवारों में विघटन होने लगा। बदलते हुये परिवेश, परिस्थिति, मूल्यों, मान्यताओं, भावनाओं ने तथा स्वतन्त्र भारत की जनतांत्रिक शासन प्रणाली और पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में व्यक्तिवादी मनोप्रवृति के कारण संयुक्त परिवार में बाहरी तौर के साथ साथ आंतरिक विघटन भी होने लगा। संयुक्त परिवार का मौलिक रूप में बिखराव भारतीय-समाज के जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन था। स्वतन्त्रता के पश्चात् व्यक्ति अधिकाधिक आत्मकेन्द्रित होने के कारण संयुक्त परिवार टूटकर आणविक परिवार में परिवर्तित होने लगा। अब व्यक्ति अपने पारम्परिक मोह पाश से मुक्त हो, सामाजिक संबंधो से दूर होने लगा। परिवार के स्थायित्व के लिये स्त्री-पुरूष संबंध तथा इसमें मुख्य रूप से पति-पत्नी का मुख्य प्रभाव रहता हैं। स्वातंत्र्योतर आत्मकथाओं में स्वातन्त्रपूर्व व पश्चात् समाज में व्याप्त स्त्री पुरूष संबंधों का स्पष्ट उल्लेख मिलता हैं। जिसके आधार पर परिवर्तित हुये स्त्री-पुरूष संबंध परिलक्षित होते है। जैसे तत्कालीन स्त्री-पुरूष का विश्लेषण करते हुए बच्चनजी अपने विचार व्यक्त करते है-

पति-पत्नी के संबंध क्या है, इस पर विभिन्न युगों और समाजो में तरह-तरह के प्रयोग होते आये हैं। कही आदर्श को आगे रखकर कही वास्तविकता को, और मुझे लगता है कि "यज्ञ नार्यस्तु पूज्य से" और देवी। माँ। सहचरी। प्राण! से उस संबंध के प्रति उतना ही अन्याय हुआ है जिसका "ढोल, गँवार, शूद्र, पशु, नारी... से। नारी को पूजने का आदर्श बनाकर पुरूष ने अपने को कम नहीं पुजवाया और पीटने का अधिकार हाथ में रखकर शायद कम पीटा भी नही-पिटाई हमेशा शरीर की ही नहीं होती। स्त्री पीटने के ऐसे सुक्ष्म तरीके जानती है कि रोयाँ न छुए और लच्छन झाड़ दे। जब तक परिवार प्रथा विघटित नही हो जाती और कृत्रिम गर्भाधान समाज स्वीकृत नहीं हो जाता तब तक पुरूष स्त्री के संतुलित संबंध की खोज बराबर जारी रहेगी।

बच्चन जी के इस कथ्य से यह स्पष्ट होता है कि पहले स्त्री-पुरूष संबंध कैसे थे और कैसे होना चाहिये। क्रान्तिवाद के आधुनिक युग में किन्तु यह सत्य बहुदा हमारी आँखो से ओझल हो रहा है कि हमारे जीवन का वृहत अंश हमारी इच्छाओं - अनिच्छाओं पर निर्भर न होकर समाज में व्याप्त व्यवस्था की शक्तियों से संचालित और नियंत्रित होता है जिस पर कोई अंकुश नहीं लगा सकता। क्योंकि जिस तरह हम अपने शारीरिक व्यापारों के अलावा भिन्न क्षेत्रों के कार्यकलापों मे पूर्ण रूप से स्वतन्त्र नहीं होते। हमारी भाषा, वेशभूषा, खानपान, रहन-सहन तथा सामाजिक रीति-रिवाज सब कुछ हमें इतिहास की देन है, जिससे हम पूर्ण रूप से न सही आंशिक रूप से जरुर जुड़े रहते ही है। यही संबध समाज एवं परिवार का निर्माण करते हैं। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि परिवर्तन के इस युग में भी मानवीय संबंध में परिवर्तन ही नही हुआ है, समय व परिस्थिति से प्रभावित होकर उसका परिष्कृत रूप ही सामने आया है, तत्संबंधी अपने विचार व्यक्त करते हुये सेठ गोविन्ददास ने आत्मकथा में लिखा -"पृथ्वी तल पर मानव जीवन का शायद ऐसा जिसमें मानव सर्वथा स्वतंत्र था। यदि मानव इतिहास में ऐसा कोई युग होता तो भी जीवन स्वतन्त्र न होता, क्योंकि उस समय भी वह प्रकृति की जंजीरों से, अपने शारीरिक व्यापारों की जंजीरों से और अपने मानसिक गठन व्यापारों की जंजीरों से बंधा ही होता। आज भी जो लोग यह सोचते है कि वे भूतकाल की इन सब जंजीरों से पिंड छुड़ा सकेगें वे लोग यह भूल जाते है कि ये जंजीरे ऐसी धातु की नहीं बनी है जो मानव के रोष से जलकर राख हो जाती है। इन जंजीरो का निर्माण तो मानव का निजी शरीर, निजी मन, निजी जीवन क्रम है और इनको तोड़ने का अर्थ मानव जीवन को ही मिटा देना है। हाँ इन जंजीरो में परिवर्तन हो सकता है, इसका रंग-रूप बदला जा सकता है, किन्तु इन्हें मिटाया नहीं जा सकता, तोड़ा नहीं जा सकता।"[१]

माता-पिता और सन्तानों के पीढ़ीयों के अन्तराल के कारण तथा काल परिवेश परिस्थिति के अनेक प्रकार के संघर्षो तनावों के कारण पीढ़ियों के विचार कार्यो में परिवर्तन संभव है। स्त्री-पुरूष को पती-पत्नी के रूप में पारस्परिक संबंध व मानसिक गठन के लियें विवाह नामक जंजीर का प्रयोग किया जाता है किन्तु स्त्री-पुरूष के अन्य संबंध जैसे भाई-बहन, पिता-पुत्री, माता-पुत्र, आदि के तरह अन्य स्त्री-पुरुष संबंध में हमेशा एक संघर्ष तनाव होता है । क्योंकि माता-पिता और सन्तानों के बीच विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों में विचारों एवं मूल्यों में समन्वय नहीं हो पाता, जिससे आपसी टकराव, अलगाव की स्थिति बनी रहती है। चूँकि पति-पत्नी संबंध में भी समन्वय के अभाव में ऐसी परिस्थितीयाँ आती ही है किन्तु विवाह की जंजीर होने से इस संबध को बनाये रखने के लिये वे आपसी समन्वय बनाये रखने की कोशिश करते रहे है। आत्मकथाओं के माध्यम से स्त्री-पुरूष के सभी प्रकार संबंधों का विस्तृत उल्लेख मिलता है।

स्वातंत्र्योत्तर के बदलते हुये परिवेश में बदलते हुये रिश्तो को जानने के लिये हमें प्राचीन परिपाटी में स्त्री पुरूष संबंध का ज्ञान होना आवश्यक है। तत्संबंधी चतुरसेन शास्त्री ने विवाह की प्राचीन पद्धति एवं स्त्री-पुरूष संबंध का उल्लेख करते हुये वेद, ऋग्वेद, उपनिषद, मनुस्मृति में उल्लेखित स्त्री-पुरूष के विवाह व सम्मान सम्बन्धी बातें का उल्लेख करते हुये लिखा है की- "मैं आपका ध्यान विवाह के संबंध में प्राचीन हिन्दू परिपाटी की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ। वेद जो आर्यो की अति प्राचीन धर्म-पुस्तक हैं, उसमें विवाह के संबंध में जात-पात का भेदभाव बिल्कुल न था। वहाँ अबोध बालिकाएँ माता-पिता द्वारा नहीं ब्याही जाती थी। ऋग्वेद की विवाह संबंधी कथाएँ अत्यन्त मनोरम है। जैसे-'हे कुमारी सूर्य ने तुझे बन्धन में बांधा है, अब हम तुझे इससे मुक्त करके तुझे तेरे पति के साथ ऐसे स्थान पर रखते है, जो सचाई और पुण्य का घर है' (ऋ.म.1 सूक्त 46 ऋचा 23)'तुझे सन्तान हो और तुझे आर्शीवाद मिले। अपने घर का काम प्रसन्नता से कर अपना शरीर इस पति के साथ एक कर और बुढ़ापे तक इस घर में प्रभुत्व कर,' (ऋचा 27)

'यदि किसी स्त्री के पति, जो ब्राम्हण नही, हो चुके हो और इसके उपरान्त कोई ब्राम्हण उससे विवाह करना चाहे, तो केवल वही उसका पति हैं' (अथव वेद 5/17/8)

इससे पता चलता है कि स्त्रियों की विवाह संबंधी स्वाधीनता कहां तक थी। ब्राम्हणकाल में बहुभार्या होने लगी थी, तथा स्त्रीयाँ अपने पतियों के सिवा अन्य पुरूषों से भी संबध रखती थीं। यह संबंध विशेष अवस्थाओ में नियोग कहाते तथा वैध रीति से किये जाते थे और कभी गुप्त भी होते है। उदाहरण के लिये याज्ञवल्क्य ऋषि की दो पत्नियों का उल्लेख काफी है।

उपनिषद में तो जहाँ तहाँ उदाहरण पाए जाते है, उनसे पता चलता है कि उस काल में भी स्त्रियों की स्वतन्त्रता के प्रति लोगों की कोई विरक्ति या तिरस्कार का भाव न था। सत्यकाम जाबाल का उदाहरण ही इसका बहुत पुष्ट प्रमाण है। बहुविवाह की प्रथाएं उस समय न केवल भारतवर्ष ही में, प्रत्युत अन्य देशों में भी थी। द्रौपदी, कुन्ती, तारा, मन्दोदरी के उदाहरण भी तत्कालीन विवाह संबंधी स्वाधीनता पर प्रभाव डालते हैं। मनु ने 8 वे अध्याय के 204 श्लोक में एक अद्भुत बात लिखी हैं कि 'यदि वर को कन्या दिखायी जाय और विवाह दूसरी से किया जाय तो वह एक ही मूल्य में दोनो से विवाह कर सकता है। मनु ने पुनर्विवाह करने का भी अधिकार स्त्रियों से छीनने की चेष्टा की है। एक स्थान पर वह 12 वर्ष की कन्या को 30 वर्ष के मनुष्य से विवाह करने की सम्मति देता है। (10/64)। वह यह भी कहता है कि पिता को चाहिये कि वह अपनी कन्या किसी प्रसिद्ध सुन्दर पुरुष को दे दे- भले ही वह उचित अवस्था को न भी प्राप्त हुई हो। वह विधवा या सधवा सभी स्त्रियों को अन्य पुरूष के संसर्ग से बचाना भी चाहता है। वह उन्हे आजीवन पुरुषों के आधीन बना रखना चाहता है, वह बल पूर्वक पति के प्रति उनमें श्रद्धाभाव उत्पन्न करना चाहता है। वह उन्हें बताना चाहता है कि वह पति पृथ्वी पर सर्वश्रेष्ठ है। मनु ने उच्च जाति के पुरूष को नीच जाति की स्त्री से विवाह करने की स्वतन्त्रता दी थी। परन्तु याज्ञवल्क्य ने इसका विरोध किया है। वह विधवाओं को मृत पति के साथ जीवित भस्म होने का आदेश देता है।

पुराणों में इन सब आधुनिक स्मृतियों की छाप पड़ी है। इस प्रकार हम देखते है कि प्राचीन हिन्दू जाति की विवाह-पद्धति धीरे-धीरे संकुचित होते-होते अन्ततः यहाँ तक संकुचित हो गयी।"[२] शास्त्रीजी का यह अनुशीलन हमें आधुनिक युग में भी दृष्टिगोचर होता है। आत्मकथा इसका प्रत्यक्ष दर्शन है। सर्वप्रथम ज्यादातर आत्मकथाओं मे हम यह देखते है, कि पहले परम्पराओं व मान्यताओं व बड़ों को सम्मान देने की दृष्टि सें परिवार की सहमति से ही विवाह हुआ करते थे और वह भी बाल-विवाह। उस समय दूल्हा-दूल्हन की स्थिति कैसे होती होगी इसका प्रत्यक्ष दर्शन कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी की आत्मकथा मे मिलता है उन्होने अपने अनुभवों को इस तरह व्यक्त किया- "मुझे विवाह करना अच्छा नहीं लगता था। एक तो यह बात थी कि मैने एक बालसखी के साथ विवाह करने का निश्चय किया था और दूसरे मेरी होने वाली पत्नी उम्र और कद में बहुत छोटी थी। लेकिन दोनो में से एक भी बात ऐसी न थी जो कही जा सकती। कारण मैं पिताजी की इच्छा का सदा आदर करता था।"[३]

समाज में तब बाल विवाह के साथ साथ पर्दा प्रथा भी जोरों पर थी जिसके कारण स्त्री-पुरूष का मिलन रात के अंधेरे में ही होता था। तत्संबधी राजेन्द्रप्रसाद ने अपने अनुभव इस तरह व्यक्त

किये "हमारे यहां पर्दा बहुत सख्त होता है। मैने देखा था कि जब मेरी भौजाई आई तो उनके साथ दो दाइयां आई थी और वह केवल उन दोनों से बातें कर सकती थी। जीरा देई एक कमरे में रहती थी। कभी ओसारे में भी निकलने की इजाजत नही थी। हां नित्य-क्रिया के लिए जाने के लिये पहले सब लोग हटा दिये जाते। जब मेरी स्त्री दुरामगन के बाद आई तो उनके साथ भी यही तब बखेडा रहा। मेरी हालत यह थी कि मैं जब भी छुट्टियों में आता बाहर ही सोता। रात के समय जब सब लोग सो जाते तो मां दाई को भेजती कि जगा लाओ और वह जगाकर मुझे ले जाती और उस कमरे में छोड़ देती, जिसमें मेरी पत्नी रहती।"[४] (आत्मकथा - डॉ. राजेंद्र प्रसाद पृष्ठ २८, २९)

ऐसी दशा शायद सभी बाल वर-वधू की होती होगी किन्तु इस बाल-विवाह प्रथा की महत्ता को पूर्वज निम्न कारण बताते है जो कि स्त्री-पुरूष संबध को दृढ बनाने में सहायक है। उनका कुछ ऐसा कथन था कि छोटेपन में चाहे जिस प्रकार के दम्पति का प्रणय सूत्र माता-पिता बांध दे उनमें मेल हो ही जाता है। बड़े होने पर जब विचारों मे लोच नही रहती तो थोड़े से भी अनमेल व्यवहार में घोर विरोध उत्पन्न हो जाता है। साथ ही साथ उनका यह भी विचार था कि जब बच्चे पन्द्रह वर्ष से ही अपने ब्रम्हचर्य की रक्षा नही कर पाते तो उसकी दुर्बलता को उचित मार्ग पर क्यों न चलाया जाय।"[५] (मार्ग के गहरे चिन्ह - सद्‌गुरूशरण अवस्थी पृष्ठ - ६०) निःसंदेह बालविवाह का असर बच्चो पर कुछ और ही होता था जिसका वर्णन सद्‌गुरूशरण अवस्थी ने बखूबी किया वे कहते है " इन सब बातों की स्थितियों का परिणाम नवदम्पति के जीवन पर पड़ता था जैसे वह आयु जो खेलने कूदनें की थी उसमें रति और रमण का पाठ सामने आया। नव-दम्पति के सोहाग ने अनुराग को जन्म दिया-अनुराग को प्रेम सेवा और उत्सर्ग की ओर ले जाना चाहिये था। प्रकृति की प्रणोदना ने नवसिखिया अभिनय कच्चे रंगमंच पर चलने लगा। स्कूल की पढ़ाई और घर का उलझाव साथ-साथ चल पड़े।"[६] (मार्ग के गहरे चिन्ह - सद्‌गुरूशरण अवस्थी - पृष्ठ ६१) इसलिए महात्मा गाँधी अपने बालविवाह होने पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहते है कि "यह लिखते हुए मन आकुलता है कि तरह साल की उम्र में मेरा विवाह हुआ था। आज मेरी आँखों के सामने बारह -तरह वर्ष के बालक मौजूद है उन्हें देखता हूँ और अपनर विवाह का स्मरण करता हूँ तो मुझे अपने ऊपर दया आती है और बालकों को मेरी स्थिति में से बचने के लिए बधाई देने की इच्छा होती है तेरहवें वर्ष में हुए अपने विवाह के समर्थन में मुझे एक भी नैतिक दलील सूझ नहीं सकती।" [७] (सत्य के प्रयोग - महात्मा गाँधी पृष्ठ -५)

स्त्री-पुरूष संबंध में स्त्री का भी विशेष प्रभाव रहता जहाँ तक स्त्रियों के पुरुषो के प्रति विचार भावना है। वह शुरू से अन्त तक एक समान ही रहती थी चाहे वह पहला विवाह हो या दूसरा, क्योंकि उसका बाहरी जीवन शून्य था। घर के घर में विचार भावनाओं का परिवर्तन असंभव है किन्तु

पुरूष का जीवन अन्दर बाहर दोनों और होने के कारण उसमें विचार भावनाओं में परिवर्तन होता रहता है जैसे बच्चन जी ने कहा- "श्यामा से मेरा संबंध खेल की सहेली के रूप में आरंभ हुआ था और उसी का विकसित रूप सारे जीवन बना रहा- मैं तुम्हे पत्नी समझ पाया कहां था, खेल की तुम थी सहेली। और श्यामा के मेरे जीवन से विदा होने से लेकर तेजी के मेरे जीवन मे आने तक नारी-पुरूष संबंध के प्रति मेरी धारणा बहुत बदल चुकी है। बच्चनजी के यह विचार यह सिद्ध करते है कि मनुष्य के विचार समय के साथ साथ बदलते रहते है। जिससे उनके जीवन संबंधों में परिवर्तन भी स्वाभाविक है।"[८] (नीड़ का निर्माण फिर - हरिवंश राय बच्चन - पृष्ठ -२६१) यहाँ गांधीजी भी उस समय के विवाह नियम बताये की काठियावाड़ में विवाह का अर्ध लग्न है, सगाई नहीं दो बालको को ब्याहने के लिए मन बाप के बिच होने वाला करार सगाई है सगाई टूट सकती है। सगाई के रहते वर यदि मर जाये तो कन्या विधवा नहीं होती। सगाई में वर -कन्या के बिच कोई सम्बन्ध नहीं रहता। दोनों को पता भी नहीं रहता। मेरी एक एक करके तीन बार सगाई हुई थी। ये तीनो सगाईयाँ कब हुई, इसका मुझे कुछ पता नहीं था।"[९] (सत्य के प्रयोग महात्मा गाँधी पृष्ठ ५)

यही नही बेमेल विवाह के कारण पुरूषों का अन्य स्त्रियों से संबंध भी स्वाभाविक था। अपनी पसंद व स्वभाव विचार के अनुसार जिस स्त्री की ओर आकर्षित होते यदि वह सोचते की यह ठीक है तो वह उसे छुपाना भी जरूरी नही समझते। हरिवंशराय बच्चन के अनुसार- "जो स्त्री मेरे विचार से पूज्य है, उसका संबंध मै बिना संकोच जगत को दिखला देना चाहता हूँ, जो संबंध रखने योग्य हो, उसे छिपाने योग्य मैं नही समझता।" निःसंदेह "स्त्री-पुरूष संबंध बौद्धिक समानता के आधार पर टिके रहते हैं और पहले स्त्रीयाँ घर की चार दिवारी में ही रहती थी और शिक्षा का अभाव। किंतु फिर भी मध्यकालीन भारतीय नारी बाहरी समाज से पीछे हटा दी गई हो पर घर पर वह पूरा अधिकार रखती थी, जताती भी थी। मकान की मालकिन स्वयं बनकर उसने पुरुष को घर का रखवाला सा बनाकर बाहर बिठा दिया था। कहीं किसी झरोखे या दीवार के सूराख से जिससे वह तो देख सके, पर उसे कोई न देख सके -वह पुरूष की गतिविधि पर भी नजर रखती थी। कौन आया-कौन गया, क्या कह गया, क्या सुन गया-सबकी उसको पूरी खबर रहती थी।"[१०] क्या भूलू क्या याद करू- (हरिवंश राय बच्चन- पृष्ठ -५४)

वैवाहिक जीवन में हर पल जहाँ एक और विश्वास और मान्यतायें टूटती है दूसरी और नये आयाम जन्म लेते हैं। यह संसार आपसी संबंधो का हिसाब मांगता है और रिश्तों की गहराई को नापता है। पति और पत्नी में दो संबंध, जगत में खासकर मानव समाज में अप्रतिम है। यह कहा जा

सकता है कि स्त्रीत्व और पुरूषत्व इन्हीं दो केन्द्रों पर वह अपनी पूर्ण कलाओं का विस्तार करना हैं।[११] (मेरी आत्मकहानी आचार्य चतुरसेन शास्त्री पृष्ठ -११५)

भारतीय विवाह में इतनी समस्याओं के बावजूद आज सबसे ज्यादा भारत देश में ही विवाह सफल हुये हैं। इंग्लैंड में एक सज्जन ने जब गांधीजी से पूछा कि भारतीय विवाह इतने सफल क्यों है तब इसका कारण गांधीजी ने इस तरह बताया- "इसका मुख्य कारण यही है कि जहाँ आप लोग उससे विवाह करते हैं जिसे आप प्यार करते हैं। वहां भारतीय उसे प्यार करते हैं। जिससे वे विवाह करते हैं।" विभिन्न आत्मकथा में कथाकारों के घटनाओ के आधार पर यह सिद्ध होता है कि यह परिवर्तन व अनुकरण का युग है। इसमें अब स्त्रियां भी शिक्षित हों पुरूषों के बराबरी में कदम से कदम मिलाकर चल रही है। इस नई जीवन पद्धती व विचारधारकों के कारण परिस्थितियों में भी परिवर्तन हो चला है, परिवर्तन के साथ साथ समस्यायें भी बढ़ी। आज पुरुष की तरह स्त्री भी अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व के साथ अपने हक, खुशी, विचार, पसंद से जीवन व्यतीत करती है। इसलिये इससे पुरूष के अहं को ठेस पहुंचती है क्योंकि यह अब वह पत्नी नही है जो अपना सम्पूर्ण जीवन अपने पति व ससुराल की सेवा व भक्ति में व्यतीत करें। लेकिन अब पुरूषों के भी विचार परिवर्तन होने लगे है उन्हें भी अब घर में बैठने वाली, अशिक्षित, दकियानूसी पत्नी नहीं चाहियें, वह भी चाहता है कि उसकी पत्नी का भी एक स्वतन्त्र अस्तित्व, व्यक्तित्व हो। आज का पुरूष एक टिपिकल पत्नी न चाहकर पत्नी के साथ एक मित्र भी चाहता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ -

१. आत्मनिरीक्षण - आत्मकथा पृष्ठ ६०
२ मेरी आत्मकहानी - आत्मनिरीक्षण पृष्ठ १९५ से १९९
४ आत्मकथा - डॉ. राजेंद्र प्रसाद पृष्ठ २८, २९
६ मार्ग के गहरे चिन्ह - सद्‌गुरूशरण अवस्थी - पृष्ठ ६१
७ सत्य के प्रयोग - महात्मा गाँधी पृष्ठ -५
८ नीड़ का निर्माण फिर - हरिवंश राय बच्चन - पृष्ठ -२६१
९ सत्य के प्रयोग - महात्मा गाँधी पृष्ठ ५
१० क्या भूलू क्या याद करू- हरिवंश राय बच्चन- पृष्ठ -५४
११ मेरी आत्मकहानी - आचार्य चतुरसेन शास्त्री पृष्ठ -११५